I रिपोर्ट का विषय

1.1 केंद्रीय बैंकों का अपने चारों तरफ बदलती हुई राजनैतिक और आर्थिक शक्तियों के जवाब में लगातार विश्वव्यापी स्तर पर विकास हुआ है। सत्रहवीं सदी के अंत में, स्वीडन (1668) और इंगलैंड (1694) में शुरू होकर, केंद्रीय बैंकों का विस्तार विश्व की अलग-अलग जगहों पर अठारहवीं सदी में धीरे-धीरे हुआ (ब्रॉज़, 1998)। तथापि, उन्नीसवीं सदी में यूरोप के कई देशों ने जैसे फ्रांस (1800), फ़िनलैंड (1811), नीदरलैंड्स (1814), आस्ट्रिया (1816), नार्वे (1816), डेनमार्क (1818), पुर्तगाल (1846), बेल्जियम (1850), स्पेन (1874), जर्मनी (1876), इटली (1893) और एशिया में जापान (1882) ने केंद्रीय बैंकों की स्थापना की। तब से, केंद्रीय बैंकों के अधिदेश पूरी तरह से रूपांतरित हुए हैं। वित्तीय प्रणाली के विस्तार ने विनियामक और निरीक्षण ढांचे को परिष्कृत एवं समाशोधन प्रणालियों को विकसित किया है। मुद्रास्फीति के बारे में उभरती हुई चिंता से मौद्रिक नीति ने केंद्रीय बैंकिंग के संचालन में विवेचनात्मक महत्व धारण किया। इसी तरह, उपनिवेशवाद की बेड़ियों से मुक्त हुए विकासशील देशों ने अपने केंद्रीय बैंकों को मूल्य स्थिरता के साथ आर्थिक विकास का उद्देश्य सौंपा। बीसवीं सदी के अंत में, वैश्विक वित्तीय बाज़ारों के विकास और वित्तीय लिखतों की प्रचुरता के साथ वित्तीय संकटों की घटनाओं ने मूल्य स्थिरता, वित्तीय स्थायित्व और जोखिम प्रबंध के लिए केंद्रीय बैंकों की चिंता को सामने लाया। सचमुच, केंद्रीय बैंकिंग की यात्रा इतिहास के पन्नों पर देखकर बिलकुल ही उल्लेखनीय लगती है।

1.2 बीसवीं सदी में विश्व के अनेक भागों में केंद्रीय बैंकिंग की स्थापना और इसकी गतिविधियों को सुदृढ़ करने की प्रारंभिक प्रेरणा युद्ध वित्तपोषण की आवश्यकता से उत्पन्न हुई। आर्थिक इतिहासकारों ने युद्ध वित्तपोषण को अनेक प्रारंभिक केंद्रीय बैंकों के गठन का मूल कारण बताया है (क्लाफ़ैम,1944 और हैमिल्टन, 1945)। इसके अतिरिक्त, युद्ध के वित्तपोषण में लगे अनेक केंद्रीय बैंकों के जो कि तब तक निजी इकाई के रूप में काम कर रहे थे, राष्ट्रीकरण के सबब बने। ज्योंही युद्ध की काली छाया घटी, केंद्रीय बैंकिंग की भूमिका अधिकतर रूप से आयोजित विकास के लिए संसाधन जुटाने और उसी समय उच्च मुद्रास्फीति से जूझने मे केंद्रित हुई। उपनिवेशी व्यवस्था कमज़ोर पड़ने पर कई राष्ट्रों के प्रादुर्भाव के साथ, भारत समेत विकासशील देशों में, केंद्रीय बैंकों के अधिदेश, प्रारूपिक केंद्रीय बैंकिंग कार्यों से अधिक आगे गए ताकि व्यापक विकासात्मक लक्ष्यों को सम्मिलित किया जा सके। परिणामतः, विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों ने अपने अधिदेशों को, आर्थिक समुत्थान और विकास में मदद करने के लिए मुद्रा जारी करने एवं सरकारी ऋण का प्रबंध करने जैसे परंपरागत कार्यों से परे विस्तारित करने पर ध्यान दिया। इस तरह उभरते बाज़ारों में केंद्रीय बैंकिंग के जुड़वाँ एवं अक्सर भिन्न उद्देश्यों का बीजारोपण हुआ। जहाँ इस परिवर्तन ने केंद्रीय बैंकों को राष्ट्रीय विकास की खातिर अधिक दायित्व सौंपा, वहीं वे राजकोषीय प्राबल्य के डर से अनावृत्त हुए जहाँ विकासात्मक उद्देश्य ने वित्तीय बाज़ारों की वृद्धि को रोका है और परिणामतःमौद्रिक नीति के निपुण संचालन को।

1.3 वित्तीय बाज़ारों का विकास, वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण, सरकारी ऋणों का प्रबंध, भुगतान और निपटान प्रणाली का संचालन तथा मुद्रा के बाह्य मूल्य का अनुरक्षण भी आधुनिक केंद्रीय बैंकिंग के मुख्य भाग हैं। विभिन्न केंद्रीय बैंकों में लिखतों और लक्ष्यों के अनेक रूप उभरे हैं। यद्यपि अनेक केंद्रीय बैंकों ने मुद्रास्फीति लक्ष्य को प्रमुख उद्देश्य अपनाया है और बहुत अधिक सफलता दर्ज़ की है, मुद्रास्फीति लक्ष्य को केंद्रीय बैंकिंग के एकमात्र अधिदेश के रूप में आम सहमति नहीं मिली है। इसके अतिरिक्त, अपेक्षित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु केंद्रीय बैंकिंग की परिचालन प्रक्रियाओं को सुदृढ़ करने के दृष्टिकोण से स्वायत्तता, पारदर्शिता, लेखा मानकों और जोखिम प्रबंध के मुद्दों का महत्व बढ़ा। परिचालन प्रक्रियाओं में बढ़ती हुई जटिलताओं से निपटने की दृष्टि से, अनुसंधान गतिविधियों को आर्थिक पर्यावरण विश्लेषित करने और उपयुक्त कार्यनीति बनाने के लिए पर्याप्त मात्रा में महत्व दिया गया। वैश्वीकरण की चुनौतियों से हुए सीमा पार पूंजी, व्यापार और सूचना के मुक्त प्रवाह ने, विकसित और विकासशील देश दोनों में, केंद्रीय बैंकिंग के विधान को पुनर्परिभाषित करना अनिवार्य बना दिया।

1.4 भारतीय रिज़र्व बैंक ने भी वर्तमान में अपनी सत्तरवीं वर्षगाँठ के समय, एक चुनौतीपूर्ण यात्रा पार की है। भारत वर्ष में केंद्रीय बैंकिंग के विकास की रूपरेखा अंकित करने के लिए यह रिपोर्ट एक समयगत यात्रा का प्रयास और भारत में केंद्रीय बैंकिंग की कायापलट करने का प्रयत्न करती है। भारत में केंद्रीय बैंकिंग संस्था के निर्माण के प्रारंभिक प्रयत्न का संकेत 1773 में मिलता है कि जब वॉरेन हेस्टिंग्स ने, उस समय प्रचलित सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों में राजकोष की ज़रूरत की पृष्ठभूमि पर ''बंगाल और बिहार में सामान्य बैंक'' आरंभ करने की योजना बनाई। तथापि बहुत बाद में सिलसिलेवार पहल ने निश्चित

प्रस्ताव का रूप धारण किया। वह लगभग बीसवीं सदी की शुरुआत थी कि जब केंद्रीय बैंक के गठन की चर्चा प्रस्ताव के समर्थन में बदल गई। इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया ने, जो कि 1921 में बंगाल, बंबई और मद्रास के तीन प्रेसीडेंसी बैंकों के एकीकरण के परिणामस्वरूप बना था, मुद्रा प्रबंध के सिवाय निश्चित केंद्रीय बैंकिंग कार्य अपना लिया था। केंद्रीय बैंकिंग इकाई राजनीतिक सत्ता द्वारा दिए गए अधिदेश से अधिक अधिकार न धारण कर ले यह निश्चित करने के उद्देश्य से मुद्रा प्रबंध का नियंत्रण भारत सरकार के पास कायम रहा। केंद्रीय बैंक के संवैधानिक ढाँचे पर वर्षों तक विवाद के पार, 'मिश्रित' किस्म की संस्था के लिए आम समर्थन होने के बावजूद, 6 मार्च 1934 को भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम को संविधि-संग्रह में शामिल किया गया। रिज़र्व बैंक ने 1 अप्रैल 1935 को काम करना शुरू किया और 1 जनवरी 1949 को उसका राष्ट्रीकरण हुआ। विश्व में केंद्रीय बैंकिंग के विकास के संदर्भ में, ''भारत में केंद्रीय बैंकिंग का विकास'' इस विषय के साथ, यह रिपोर्ट भारतीय रिजर्व बैंक के गत सत्तर वर्ष के विकास का विश्लेषण करने का प्रयास करती है।

1.5 विषय-आधारित अध्यायों की प्रस्तावना स्वरूप, ''हाल की आर्थिक गतिविधियाँ'' शीर्षक वाला अध्याय II, 2004-05 और 2005-06, 28 फरवरी 2006 तक, भारतीय अर्थव्यवस्था में समष्टि आर्थिक माहौल, विश्लेषणात्मक समीक्षा प्रस्तुत करता है।

1.6 विषय आधारित चर्चा, ''केंद्रीय बैंकिंग का कार्यात्मक विकास'' नामक अध्याय III से शुरू होती है। यह अध्याय समकालीन कार्यों और कार्य प्रणाली के विकास के साथ केंद्रीय बैंकिंग की उत्पति का एक मीमांसात्मक विवरण प्रस्तुत करता है। यह वैश्विक घटनाओं पर आधारित, केंद्रीय बैंकों की एक झाँकी, उनके निगमन से, प्रस्तुत करता है। प्रमुख पारंपरिक कार्यों, मुख्यत: विनिमय माध्यम की नवोन्मेषी पद्धतियों के स्रष्टा के रूप में, मुद्रा के आंतरिक और बाह्य मूल्यों को कायम रखने, सरकार के बैंकर के रूप में काम करने, अंतिम उधार दाता और बैंकिंग प्रणाली के नियंत्रक तथा निरीक्षक, के बारे में विस्तृत विचार करते समय, केंद्रीय बैंकिंग कार्यों के ऐतिहासिक विकास को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है। विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों द्वारा अनुष्ठित विकासात्मक कार्यों, जैसे बाज़ार निर्माण और वित्तीय क्षेत्र में सुधार, संस्था निर्माण, समन्वय और सहयोग, उभरती हुई आवश्यकताओं में आँकड़ों का विकीर्णन एवं संचारण की व्याख्या करने के अलावा वित्तीय स्थिरता को कायम रखने के कार्य को भी विश्लेषित किया गया है। इसके अलावा, यह सूचना संबंधी विषमता की खाई को भरने और नीति-अभिमुखी अनुसंधान कार्य के महत्व के लिए वित्तीय बाजारों के विकास में केंद्रीय बैंकों की भूमिका को अभिग्रहण करता है, क्योंकि आंतरिक शोध कार्य केंद्रीय बैंकिंग प्रक्रिया का मेरुदंड है। यह अध्याय कुछ समकालीन मुद्दों, जैसे स्वतंत्रता, जवाबदेही, पारदर्शिता और साख, जिस पर केंद्रीय बैंकिंग साहित्य में सक्रियता पूर्वक चर्चा की जा रही है, को रेखांकित करते हुए समाप्त होता है।

1.7 रिपोर्ट के अध्याय IV में, जिसका शीर्षक ''भारत में केंद्रीय बैंकिंग'' है, भारत में केंद्रीय बैंकिंग कार्यों के वैचारिक विकास को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है। रिज़र्व बैंक के कार्यात्मक परिवर्तन का, प्रमुख कार्यों के निष्पादन से बहुसंख्यक नए कार्यों को अपनाने तक, उभरते हुए समष्टि आर्थिक एवं सामाजिक-राजनैतिक परिस्थितियों के संदर्भ में विस्तार से विचार-विमर्श किया गया है। विवरण के लिए विश्लेषण को तीन चरणों, अर्थात् आधार चरण (1935 - 1950); विकास चरण (1951-1990); और सुधार चरण (1991 से आगे) में क्रमबद्ध किया गया है। यह अध्याय भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम में लचीलेपन को भी, जिसने रिज़र्व बैंक को शीघ्रता से बदलते हुए बाह्य एवं आंतरिक आर्थिक वातावरण में ढालने योग्य बनाया, चित्रित करता है। ग्रामीण एवं औद्योगिक ऋण-प्रवाह की वृद्धि के अलावा योजना प्रक्रिया के पूरक के रूप में मौद्रिक नीति प्रसारण आवेग की क्षमता को सुधारने के लिए रिज़र्व बैंक के संस्था निर्माण में उत्साही प्रयत्नों का भी विस्तृत वर्णन है। इसके अतिरिक्त, अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम पद्धति के अनुसार रिज़र्व बैंक द्वारा वित्तीय प्रणाली के निर्माण के लिए किए गए उपायों को भी दर्शाया गया है। मौद्रिक नीति ढांचा और विदेशी मुद्रा प्रबंध और नियंत्रण के विकास की भी विस्तृत चर्चा की गई है।

1.8 सुधार चरण में यह अध्याय, वित्तीय क्षेत्र सुधारों, बैंकिंग क्षेत्र सुधारों और ऋण बाज़ार, बाह्य क्षेत्र और मौद्रिक नीति ढांचे के अनुपूरक सुधारों का विस्तारपूर्वक निरूपण करता है। इस पृष्ठभूमि में, रिज़र्व बैंक की नीतियों का आघात सहने के निष्पादन पर प्रकाश डाला गया है। उदारीकरण और सुधारों की प्रक्रिया की तरफ रिज़र्व बैंक के दृष्टिकोण की अनुत्क्रमणीयता को रेखांकित किया गया है। अध्याय, व्यापक रूप से रिज़र्व बैंक द्वारा नकदी प्रबंध पर मुद्रा नीति संचालन में उसके उपगमन को, ज्यादा पारदर्शी बाज़ार -अभिमुखी प्रक्रियाओं के संदर्भ में, प्रौद्योगिकी अभिमुख मुद्रा प्रबंध की ओर आधारभूत कार्यों में बदलाव, तत्काल सकल भुगतान (आरटीजीएस) प्रणाली का प्रारंभ, सूचना प्रौद्योगिकी में उन्नति और नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण में अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम पद्धतियों के साथ वित्तीय स्थायित्व के उद्देश्य का अनुसरण, दर्शाता है।

1.9 अध्याय V, जिसका शीर्षक ''वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण'' है, भारतीय रिज़र्व बैंक के विनियामक और पर्यवेक्षी कार्यों की उत्पत्ति एवं विकास को रेखांकित करता है। अध्याय, आरंभ से, नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण क्षेत्र में, रिज़र्व बैंक के परिवर्तन की भिन्न अवस्थाओं को चित्रित करने का प्रयास और नियंत्रित एवं पर्यवेक्षी

नीतियों और योजनाओं के विकास को वर्णित करता है। वाणिज्यिक बैंकिंग के नियंत्रित ढाँचे के विकास का विवेचन 1950-1968; 1969-1991 और 1991 से आगे की कालावधि में किया गया है। यह, भारतीय बैंकिंग और वित्तीय प्रणालियों को, जरूरी संशोधनों के साथ सर्वोत्तम अंतरराष्ट्रीय विनियामक और पर्यवेक्षी मापदंडों को भारतीय प्रणाली को उपयुक्त बनाने में रिज़र्व बैंक के प्रयासों को दर्शाता है। बैंकिंग क्षेत्र का प्रतिपादन करने के अलावा, सहकारी बैंकों, गैर बैंकिंग वित्त कंपनियों (एनबीएफसी) एवं विकास वित्तीय संस्थाओं (डीएफआई) पर रिज़र्व बैंक के बहुरूपी आयामों को भी रेखांकित किया गया है। कहीं रिज़र्व बैंक के लिए विनियामक एवं पर्यवेक्षक के रूप में और वित्तीय प्राधिकारी के रूप में विरोधाभास तो नहीं है, इसकी भी चर्चा अध्याय में की गई है। वित्तीय स्थायित्व के लिए रिज़र्व बैंक का दृष्टिकोण, बासल II मानकों और उनका भारतीय बैंकिंग प्रणाली के लिए तात्पर्य, रिज़र्व बैंक की वित्तीय समूहों के प्रबंध की तैयारी और भारत में इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग का विनियमन एवं पर्यवेक्षण संबंधी मुद्दों पर इस अध्याय में चर्चा है। अंततः यह अध्याय, विनियमन और पर्यवेक्षण की संभावित भावी भूमिका को, वित्तीय प्रणालियों को प्रभावित करते हुए विविध गतिविधियों के संदर्भ में, चित्रित करता है।

1.10 अध्याय VI, जिसका शीर्षक ''वित्तीय बाज़ार विकास और वैश्वीकरण'' है, वित्तीय बाज़ारों द्वारा आर्थिक प्रगति के संवर्द्धन में अदा की गई निर्णायक भूमिका को प्रदर्शित करता है। वित्तीय बाजारों की उन्नति में केंद्रीय बैंक की कार्यशीलता के मूलाधार को रेखांकित करते हुए, यह अध्याय वित्तीय बाज़ारों के विकास संबंधी मुद्दों का व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इस पृष्ठभूमि में यह, मुद्रा, सरकारी प्रतिभूतियों और भारत में विदेशी मुद्रा बाजारों के विकास में रिज़र्व बैंक की भूमिका को दर्शाता है। वृद्धि, विकास और भारत में वित्तीय बाजारों की विशेषताओं को दो चरणों, अर्थात् सुधार पूर्व (1990 से पहले) और सुधारोत्तर (1990 के प्रारंभ से) कालावधियाँ, में बताया गया है। इसके अतिरिक्त अध्याय, संस्थागत, कानूनी, प्रौद्योगिकीय और विनियामक ढाँचों और उपकरणों के अनुसंधानों के विकास को इन चरणों के माध्यम से प्रस्तुत करता है। यह बाज़ार एकीकरण और चंचलता के मुद्दों को विश्लेषित करता है तथा असमंजसता और चुनौतियों को रेखांकित करता है। अध्याय, वित्तीय बाजारों के विकास में रिज़र्व बैंक की बदलती भूमिका को, उदारीकरण और वैश्वीकरण, मौद्रिक नीति संचरण तंत्र के विकास, कानूनी और संस्थागत इंफ्रास्ट्रक्चर द्वारा प्रस्तुत अड़चनों के संदर्भ में उजागर करता है और अंत में भविष्य की चुनौतियों को रेखांकित करता है।

1.11 अध्याय VII, जिसका शीर्षक ''मौद्रिक और राजकोषीय विचार विमर्श के मुद्दे'' है, मौद्रिक और राजकोषीय विचार विमर्श की प्रमुख घटनाओं को, रिज़र्व बैंक की शुरुआत से विश्लेषित करता है और राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध (एफआरबीएम) अधिनियम, 2003 लागू करने के परिप्रेक्ष्य में भावी चुनौतियों की चर्चा करता है। यह अध्याय, वैश्विक परिप्रेक्ष्य में, विषय के विकास, सिद्धांत और विश्लेषणात्मक ढांचे को अनुरेखित करता है। यह मानते हुए कि मौद्रिक राजकोषीय विचार विमर्श रूपात्मकता देश विशिष्ट है, मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों की निरंतरता और अनुपूरकता, जो कि बाज़ार विश्वास और मुद्रा स्थायित्व के लिए पूर्वापेक्षित हैं, को रेखांकित किया है। भारत में मौद्रिक राजकोषीय विचार विमर्श की विकास प्रक्रिया को तीन चरणों में, अर्थात् रचनात्मक चरण (1935-1950); राजकोषीय दबदबा एवं मौद्रिक समायोजन चरण (1950-1991) और समष्टि आर्थिक संकट, सुधारों तथा उनके प्रभाव का चरण (1991-2003), अनुक्रमित किया गया है। चूँकि रिज़र्व बैंक द्वारा सार्वजनिक ऋण प्रबंध, भारत में मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी है, यह अध्याय इस क्षेत्र की घटनाओं का, नियम-आधारित राजकोषीय समेकन ढांचे में, निष्क्रिय से सक्रिय ऋण प्रबंध कार्यनीति बदलाव का (2003-2005) वर्णन करता है। राजकोषीय जवाबदेही एवं बजट प्रबंध अधिनियम के परिप्रेक्ष्य में, 2005-2009 की अवधि के लिए, राजकोषीय और मौद्रिक समन्वय का एक विश्लेषणात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है। अंत में अध्याय समापन टिप्पणी के रूप में, भारत में मौद्रिक राजकोषीय विचार विमर्श का मूल्यांकन करते हुए, कतिपय मुद्दों को प्रमुखता से उजागर करता है।

1.12 किसी मुद्रा प्राधिकारी का तुलन-पत्र अनोखा होता है क्योंकि एक तरफ केंद्रीय बैंक मुद्रा सृजन का स्रोत है और दूसरी ओर वह सरकार, बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली के साथ केंद्रीय बैंक के संबंधों को प्रतिबिंबित करता है। आठवाँ अध्याय जिसका शीर्षक 'रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र' है, केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र के पहलुओं और भारतीय अर्थव्यवस्था के विकासगति के साथ उसके अनुबंधों को, मुद्रा प्राधिकारी, ऋण प्रबंधक और बैंकिंग क्षेत्र और वित्तीय बाज़ारों कें विनियामक के रूप में केंद्रीय बैंक की जटिल भूमिका को दर्शाते हुए, रेखांकित करता है। चयनित देश-अनुभवों की पृष्ठभूमि में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का एक विश्लेषणात्मक खाता प्रस्तुत है। केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र के विश्लेषणों का विहंगम रूप प्रस्तुत करते हुए, अध्याय, केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में, सुरक्षित मुद्रा के सृजन के अनुसार अंतर्निहित मूलभूत मौद्रीकरण का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है। और इसके अतिरिक्त, देश अनुभवों से केंद्रीय बैंक तुलन पत्र को बनाने और प्रस्तुत करने पर ध्यान केंद्रित करने के अलावा यह केंद्रीय बैंकों में आस्तियों और देयताओं की बनावट, पूंजी और संचय निधि की अवस्था को लेकर मतभेदों के साथ अनेक मुद्दों को, केंद्रीय बैंकों को सौंपी जिम्मेदारियों में मतभेदों को भी दर्शाते हुए, वर्णन करता है। सरकार और केंद्रीय

बैंक के बीच लाभ वितरण प्रक्रिया के संबंध में, पूंजी और संचय निधि की अवस्था तथा देश अनुभवों के मुद्दों का भी विचार किया गया है।

1.13 रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का एक विस्तृत विश्लेषण, शासन बदलाव की पृष्ठभूमि में, मौद्रिक नीति विकास और बदलते हुए समष्टि आर्थिक पर्यावरण के अनुसार प्रस्तुत किया गया है। विश्लेषण चार चरणों, रचनात्मक चरण (1935-1949); आधार चरण (1950-1967); सामाजिक नियंत्रण चरण (1968-1990); और वित्तीय उदारीकरण चरण (1991 से आगे), में किया गया है। अध्याय, रिज़र्व बैंक के बदलते रूप पर, उसके सर्जन (घरेलू के मुकाबले अंतरराष्ट्रीय आस्तियाँ), सरकार को समर्थन, मात्रा और वित्तीय प्रणाली के वित्तपोषण की शर्तें, विदेशी मुद्रा भंडार का निर्माण और रिज़र्व बैंक के आय की रूपरेखा पर उसके प्रभाव के आकलन को, जैसा कि तुलन पत्र में प्रतिबिंबित होता है, व्यापक रूप से विचार करता है। वैश्विक घटनाओं की तरह रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र लेखांकन और प्रकटन मानकों में अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम प्रणालियों को अपनाने की ओर, एक स्पष्ट बदलाव दर्शाता है। लेखांकन प्रथाओं का विकास भी शामिल किया गया है। अध्याय इसके अतिरिक्त, रिज़र्व बैंक और उसके घटकों के लाभ-हानि खातों का विश्लेषण करता है। इसके अलावा, आय-व्यय की प्रवृत्तियों और लाभ का केंद्रीय सरकार को अंतरण संबंधी मुद्दों का भी विस्तृत विवरण दिया गया है। केंद्रीय बैंक लेखा में पारदर्शिता, केंद्रीय बैंकों में जोखिम प्रबंध और संभाव्यता संचयनिधि संबंधित मुद्दों पर विचार किया गया है। अंततः, उभरते मुद्दों और रिज़र्व बैंक के नीति कार्यों पर उनके संभाव्य असर के निर्धारण का प्रयास किया गया है।

1.14 अध्याय IX जिसका शीर्षक ''संगठनात्मक विकास और कार्यनीतिक आयोजना'' है, रिज़र्व बैंक में उसकी संस्थापना से, संगठनात्मक विकास एवं व्यवस्था वृद्धि को रेखांकित करता है और उसकी बदलती भूमिका और वर्षों से अपनाए गए कार्यों को बताता है। अध्याय, रिज़र्व बैंक द्वारा, आर्थिक और वित्तीय प्रणाली में उभरते मुद्दों को भलीभांति जवाब देने के लिए, संगठनात्मक पुनर्रचना के लिए किए गए उल्लेखनीय उपायों के साथ मानवशक्ति प्रबंध को दर्शाता है। आजकल, केंद्रीय बैंकिंग पर किसी भी बहस में कार्यनीतिक आयोजना अग्रणी रहती है। इस पृष्ठभूमि में अध्याय, रिज़र्व बैंक की कार्यनीतिक आयोजना संबंधी पहलों का, ठोस उद्देश्यों को स्थापित करने और मध्यम अवधि में उनकी उपलब्धि के लिए, वर्णन करता है। अध्याय, इस क्षेत्र में अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) की कुछ पहलों को रेखांकित करता है और आंतरिक एवं बाह्य पर्यावरण के बदलते हुए माहौल में संगठनात्मक कायापलट के सफलतापूर्वक अंशांकन में रिज़र्व बैंक के प्रयत्नों को प्रमुखता से उजागर करता है।

1.15 अंतिम अध्याय X जिसका शीर्षक ''समापन टिप्पणियाँ'' है, भारत में केंद्रीय बैंकिंग से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर कुछ अंतिम विचारों को परिभाषित करता है।